1.0 उद्देश्य

संस्कृत के प्रश्नपत्र की इस प्रथम इकाई में दर्शन का सामान्य परिचय, सांख्य दर्शन के प्रमुख आचार्य एवं ग्रन्थ तथा सांख्यकारिका का परिचय प्रस्तुत किया जाएगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- दर्शन क्या है यह समझ सकेंगे।
- भारतीय दर्शन का स्वरूप समझ सकेंगे।
- सांख्य दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ एवं आचार्यों के बारे में जान सकेंगे।
- सांख्यकारिका के रचयिता और ग्रन्थ के सामान्य स्वरूप के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

संस्कृत के प्रश्नपत्र ।।। के अंतर्गत आप दर्शन के विभिन्न ग्रन्थों के माध्यम से दार्शनिक सिद्धांतों का परिचय प्राप्त कर रहे हैं। इसके अंतर्गत मानव जीवन में दार्शनिक विचारों का उद्भव कब और कैसे हुआ? उनका विकास किन परिस्थितियों में हुआ? दर्शन के विविध सिद्धांत कसे स्थापित हुए? अलग–अलग सिद्धांतों के आधार पर अनेक दर्शन कैसे बने? गुरु शिष्य परम्परा और ग्रन्थ के आधार पर विभिन्न सम्प्रदाय किस प्रकार विकसित हुए? दर्शन सम्बन्धी इन प्रश्नों के उत्तर जानने के पश्चात् सांख्य दर्शन के ग्रन्थों व आचार्यों का परिचय दिया जाएगा। इसके साथ ही सांख्य दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ सांख्यकारिका का सामान्य परिचय इस इकाई के आध्ययन से आपको प्राप्त हो सकेगा।

1.2 दर्शन– सामान्य अर्थ

दर्शन शब्द दृश् धातु से भाव और करण अर्थ में ल्युट् प्रत्यय करने से निष्पन्न होता है। इसका अर्थ है देखने का भाव अथवा साधन। यहाँ पर देखने के साधन तो इन्द्रियाँ हैं ही, किन्तु उन इन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर उनके पीछे छिपे सत्य अथवा मूल कारण की खोज करना ही दर्शन का प्रयोजन है। इस प्रकार दर्शन का सामान्य अर्थ इन्द्रियों के माध्यम से संसार के भौतिक स्वरूप को जानकर उनके भीतर स्थित वास्तविकता, सत्यता, एकसूत्रता, अथवा मौलिकता का ज्ञान प्राप्त करना है। यह ज्ञान घटनाओं के तार्किक परीक्षण, सूक्ष्म निरीक्षण और अन्तर्दृष्टि द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार दर्शन सत्य के अन्वेषण की जिज्ञासा से प्रारंभ होता है और इसका अन्तिम लक्ष्य आत्मा का अपरोक्ष का साक्षात् ज्ञान प्राप्त करना है।

1.2.1 दार्शनिक विचारों का उद्भव

दार्शनिक विचारों का प्रारम्भ जिज्ञासा से होता है। मानव की स्वयं के अस्तित्व, परिवेश, क्रिया–कलाप, स्वरूप आदि से संबंधित जिज्ञासाएँ और उनके उत्तर प्राप्त करने के लिए किए गए विमर्श ही दार्शनिक सिद्धांतों को जन्म देते हैं। वैदिक काल का ऋषि प्रकृति के व्यापारों में एकसूत्रता देखता है, वह यह देखता है कि दिन के बाद रात आती है, फिर सूर्य उदित होता है, समय पर वर्षा होती है, पृथ्वी में अन्न उत्पन्न होता है, नदियाँ बहती है, तब वह इन प्राकृतिक व्यापारों के पीछे किसी शक्ति के होने का अनुमान करता है। उसे डर लगता है कि वह शक्ति नाराज होकर अपना व्यापार न रोक दे। वह इनमें सविता, अग्नि, सूर्य, पर्जन्य, मरुत्, उषस् रात्रि, वरूण, इन्द्र, रुद्र आदि देवताओं का आरोप करता है तथा इनकी प्रशंसा में सूक्त कहता है।

अपने सरल स्वभाव और कवित्व शक्ति से वैदिक ऋषियों ने इन प्राकृतिक शक्तियों के प्रति जो भावप्रवण उद्गार प्रस्तुत किए हैं वे दार्शनिक सिद्धांतों के उद्गम की पृष्ठभूमि तो हैं ही, साथ ही विश्व की प्राचीनतम सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रतिष्ठित 'वेद' है।

Scanned with CamScanner

1.2.2 वैदिक दार्शनिक सूक्त

प्राकृतिक शक्तियों में देवत्व का आरोप और उन्हें प्रसन्न करने के लिए स्तुति गान के साथ ही वैदिक ऋषि ने अपने अस्तित्व के सम्बन्ध में जिज्ञासा करना प्रारम्भ कर दिया था। मैं कौन हूं, कहाँ से आया हूं, इस सृष्टि से पूर्व क्या था? ये प्रश्न उसके मन में उठने लगे थे। सृष्टि
सम्बन्धी प्रश्नों का प्रारंभ हम नासदीय सूक्त (दशम–129) में देख सकते हैं।

नासदासीत् नो सदासत् तदानीम् नासीद्रजो नो व्योम परोयत्।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भ किमासीद् गहनं गभीरम्।।

सृष्टि से पहले न असत् था न सत् था न कोई लोक था न आकाश था, किसने किसको आवृत्त कर रखा था, क्या सर्वत्र व्याप्त अपार जल था? यह जिज्ञासा और इसके समाधान के लिए सर्वप्रथम 'काम' जो मन की अभिलाषा "एकोऽहं बहुस्याम' के रूप में परम तत्त्व के भीतर विद्यमान थी। फिर वह परम तत्त्व भी किस प्रकार का था उसके सम्बन्ध में कहा कि वह हिरण्यगभ (सोने को गभ में रखने वाला गोला/पृथ्वी) था–

"हिरण्यगर्भ समवर्ततााग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत
स दाधार पृथिवीं द्यामुत इमाम् कस्मै देवाय हविषा विधेम।"

पृथ्वी, अन्तरिक्ष को धारण करने वाला एवं समस्त प्राणियों का स्वामी वह हिरण्यगभ सृष्टि के प्रारंभ में था। उसके अतिरिक्त और किस देवता का हम हवि प्रदान कर पूजन करें? (दशम–121)

इसी प्रकार चेतन तत्त्व पुरुष जो सम्पूर्ण संसार में व्याप्त और इससे परे भी है, जो अमरता का स्वामी है और अन्न से वृद्धि को प्राप्त करता है (पुरुष सूक्त दशम–90)। इसी प्रकार के सूक्तों में हमें वैदिक ऋषि की दार्शनिक जिज्ञासा और उसे शान्त करने के प्रयास दिखाई देते हैं।

1.2.3 उपनिषदों में दर्शन

वैदिक ऋषि के द्वारा प्राकृतिक देवताओं की सन्तुष्टि के लिए की जाने वाली क्रियाओं का विकास यागादि के रूप में ब्राह्मण ग्रन्थों में हुआ। इसी प्रकार उनके दार्शनिक विमर्श का विवेचन और विकास उपनिषद् ग्रन्थों में मिलता है। सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त एक चेतन तत्त्व को पुरुष सूक्त में वैदिक ऋषि ने स्वीकार कर लिया था। वैदिक काल में वस्तुनिष्ठ ज्ञान के माध्यम से सत्य की खोज का प्रयास हुआ और उपनिषदों में आत्मनिष्ठ ज्ञान के द्वारा सत्य को प्राप्त करने का प्रयत्न मिलता है। भौतिक दृष्टि को निमीलित करने पर ही अपने भीतर छिपे हए सत्य का साक्षात्कार किया जा सकता है–

"कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत् आवृत्त चक्षुरमृतत्वमिच्छन्" (कठोपनिषद् 4.1)

बाह्य भौतिक पदार्थों की नश्वरता से भिन्न आन्तरिक शाश्वत तत्त्व की खोज में उपनिषत् का ऋषि यह पाता है कि कोई आध्यात्मिक नित्य सत्ता अवश्य है, जो देश काल से परे है और सभी को व्याप्त किए हुए है। इसी से समस्त प्राणी उत्पन्न होकर इसमें ही लीन हो जाते हैं–

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति।
यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति, तद्विजिज्ञासस्व तद्ब्रह्म।

यह परम तत्त्व ब्रह्म ही परमात्मा है एवं लौकिक प्राणियों में इसी का अंश अथवा प्रतिबिम्ब आत्मा के रूप में विद्यमान है।

1.3 भारतीय दर्शन का परिचय

उपनिषदों में आत्मा–परमात्मा, जीवन और जगत् से सम्बन्धित जो विचार उपलब्ध होते हैं कालान्तर में व्यवस्थित दार्शनिक सिद्धांत के रूप में उनका विकास हुआ और उनसे ही भारतीय दर्शन सम्प्रदायों का उद्भव हुआ। आस्तिक दर्शन जो वेद और उपनिषदों का

Scanned with CamScanner

प्रमाण अपने सिद्धांतों की पुष्टि के लिए प्रस्तुत करते हैं, प्रायः समान वाक्यों का परस्पर भिन्न सिद्धांतों की पुष्टि के लिए प्रयोग करते हैं।

"द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजातेः और **अजामेकां लोहितकृष्णशुक्लां बह्वीः प्रजाः सृजमाना सरूपाः'** आदि ऐसे उपनिषद्वाक्य हैं जिनसे प्रायः सभी दर्शन अपने विशिष्ट सिद्धान्तों की पुष्टि करते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि उपनिषदों में उपलब्ध दार्शनिक बीजों से भविष्य में विविध दर्शन सम्प्रदायों का विकास हुआ।

1.3.1 आस्तिक दर्शन

वेदों और उपनिषदों को शब्द प्रमाण के रूप में स्वीकार करने वाले दर्शन आस्तिक दर्शन कहलाते हैं। न्याय–वैशेषिक, सांख्य–योग, पूर्व मीमांसा और वेदान्त ये षड् भारतीय दर्शन प्रमुख आस्तिक दर्शन है। इन्हें युग्म रूप से प्रस्तुत करने का कारण ये समानतन्त्र दर्शन हैं। अर्थात् ये प्रतितन्त्र दर्शन की भांति एक दूसरे के सिद्धांतों का विरोध नहीं करते। आवश्यकता पड़ने पर एक दूसरे के सिद्धांतों को उसी रूप में स्वीकार भी कर लेते हैं। उदाहरण के लिए सिद्धांतों के व्यवस्थित विवेचन के लिए जो तत्त्व मीमांसा, प्रमाण मीमांसा और नीति मीमांसा आवश्यक है; इनमें से न्याय दर्शन प्रमाण मीमांसा और मोक्ष विवेचन तो प्रस्तुत करता है किन्तु वैशेषिक दर्शन की तत्त्व मीमांसा को स्वीकार कर लेता है। इसी प्रकार सांख्य दर्शन योग द्वारा प्रस्तुत नीति मीमांसा को स्वीकार कर लेता है।

1.3.2 नास्तिक दर्शन

ये वे दर्शन हैं जो वेदों को प्रमाण के रूप में स्वीकार नहीं करते। चार्वाक, जैन और बौद्ध ये नास्तिक दर्शन माने गए हैं। इन में से चार्वाक तो प्रत्यक्ष के अतिरिक्त कोई प्रमाण नहीं मानता। दृश्य पदार्थों के अतिरिक्त किसी अन्य सत्ता को स्वीकार नहीं करता। जबकि जैन एवं बौद्ध दर्शन यद्यपि वेदों को प्रामाणिक नहीं मानते, किन्तु अपने अपने आचार्य महावीर एवं गौतम बुद्ध के वचनों को प्रमाण मानते हैं और उनके उपदेशों के अनुसार आचरण करना व उनके सिद्धांतों का व्यापक प्रचार प्रसार करना, परम कतव्य समझते हैं। इसीलिए इन दर्शनों का व्यवस्थित रूप में अनेक शाखा प्रशाखाओं में विकास भी देखने को मिलता है; जबकि चार्वाक दर्शन के पास अपने कोई सिद्धांत नहीं होने और केवल परमत खण्डन ही उद्देश्य होने से, वह केवल भौतिकवाद के रूप में रह गया।

1.3.3 आधारभूत ग्रन्थ

उपनिषदों में उपलब्ध दार्शनिक विचारों को परवर्ती महर्षियों ने व्यवस्थाबद्ध दार्शनिक प्रणाली क रूप में प्रस्तुत किया। स्मरण के लिए सुकर व अधिक कथ्य को सार रूप में एक साथ प्रस्तुत करने के कारण सूत्र–ग्रन्थ पहले लिखे गए– **'अल्पाक्षरत्वे सति बह्वर्थबोधजनकत्वम् सूत्रत्वम्'।** कम शब्दों में अधिक अर्थ का ज्ञान प्राप्त करवाना ही सूत्र का स्वरूप है। गुरु–शिष्य परम्परा से सूत्रों का अर्थ पूर्ण तथा स्पष्ट न हो पाने तथा दर्शनों की परस्पर खण्डन–मण्डन की प्रवृत्ति के कारण सूत्रों की व्याख्या के लिए भाष्य अथवा टीका ग्रन्थों की आवश्यकता हुई। इन भाष्य व टीकाओं पर पुनः टीकाएँ उपटीकाएँ रची गई, जिससे प्रत्येक दर्शन का साहित्य और समृद्ध होता चला गया। आग चल कर स्थिति यह हुई कि सामान्य बुद्धि वाले विद्यार्थी को दर्शन के मूलभूत सिद्धांतों का ज्ञान कराने की दृष्टि से प्रकरण ग्रन्थों की रचना की गई। इन ग्रन्थों में दर्शन के मौलिक सिद्धांतों की सामान्य भाषा में जानकारी दी गई थी।

षड्भारतीय दर्शनों के प्रतिपादक आचार्य व सत्रग्रन्थ –

दर्शन	आचार्य	ग्रन्थ	प्रमुख भाष्य	प्रकरण ग्रन्थ
	न्याय	गौतम	न्यायसूत्र	वात्स्यायन
	तर्कभाषा			
	वैशेषिक	कणाद	वैशेषिक सूत्र	प्रशस्तपाद भाष्य
	तर्कसंग्रह			

Scanned with CamScanner

सांख्य सांख्यकारिका	कपिल	सांख्य सूत्र	सांख्य प्रवचन भाष्य
योग	पतञ्जलि	योगसूत्र	व्यास भाष्य
मीमांसा अर्थसंग्रह	जैमिनी	मीमांसा सूत्र	शाबर भाष्य
वेदान्त वेदान्तसार	बादरायण	ब्रह्म सूत्र	शांकर भाष्य

1.4 सांख्य दर्शन परिचय

सांख्य दर्शन का प्रारम्भ उपनिषद् से माना जाता है। उपनिषदों में उपलब्ध उद्धरण– **"अजामेकां लोहितकृष्णशुक्लां बह्वी प्रजाः सृजमाना सरूपा"** को सांख्य दर्शन की त्रिगुणात्मिका प्रकृति का आधार माना जाता है। वह प्रकृति एक और अनादि होते हुए अपने समान अनेक रूप संसार की सृष्टि करती है। बृहदारण्यक उपनिषद् में पुरुष को द्रष्टा बताया है और उसकी क्रियाशून्यता के कारण उसे असंग भी कहा है। इसी प्रकार **"सदेव सोम्येदमग्र आसीत्"** उद्धरण सत्कार्यवाद की पुष्टि करता है। उपनिषदों एवं परवर्ती महाकाव्य आदि ग्रन्थों में वर्णित इन सिद्धांतों को व्यवस्थित दर्शन के रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय महर्षि कपिल को दिया जाता है।

1.4.1 सांख्य शब्द–अर्थ

सांख्य शब्द कुछ विचारकों के अनुसार संख्या से निष्पन्न है; क्योंकि इस दर्शन में पच्चीस तत्त्वों की व्याख्या की गई है।

संख्यां प्रकुर्वते चैव प्रकृतिं च प्रचक्षते।
तत्त्वानि च चतुर्विंशत् तेन सांख्याः प्रकीर्तिताः।। (सांख्यप्रवचन भाष्य)

संख्या पद से सांख्य का निर्वचन वैसा ही है जैसे कि 'महत्वाद् भारवत्वाच्च महाभारतमुच्यते' जब कि महाभारत नाम वस्तुतः भरतवंशी राजाओं की कथा होने के कारण है। अतः सांख्य का निर्वचन किया जा रहा है।

1.4.2 निर्वचन

सम् उपसर्गपूर्वक चक्षिङ् ख्याने धातु से निष्पन्न इस पद का अर्थ है सम्यक् ख्यानम् या सम्यक् विचार। अमरकोश के अनुसार भी 'संख्या' पद विचारणा के अर्थ में प्रयुक्त होता है– 'चर्चा संख्या विचारणा'। इस दर्शन के लिए पंचशिखाचार्य का कहना है– "एकमेव दर्शनम् ख्यातिरेवदर्शनम्"। इस दर्शन के अनुसार 'ख्याति' (परम ज्ञान), 'प्रकृति पुरुष विवेक' अथवा 'सत्त्वपुरुषान्यथाख्याति' है। तात्पर्य यह है कि त्रिगुणात्मिका प्रकृति, जिसका परिणाम यह सम्पूर्ण संसार है, से चेतन पुरुष सर्वथा भिन्न है, यह ज्ञान हो जाना ही प्रकृति पुरुष विवेक या विवेक ख्याति है। यही इस दर्शन का परम लक्ष्य है, जिससे पुरुष को कैवल्य प्राप्त होता है।

1.4.3 आधारभूत ग्रन्थ

सांख्य दर्शन के प्रमुख आधारभूत ग्रन्थ हैं:–

महर्षि कपिल रचित सांख्य सूत्र, षष्ठि तंत्र, ईश्वरकृष्ण की सांख्यकारिका एवं विज्ञानभिक्षु के सांख्य प्रवचन भाष्य में सांख्य दर्शन के प्रमुख सिद्धांतों का विवेचन मिलता है। इसलिए इन्हें आधारभूत ग्रन्थ कहा गया है।

1.5 सांख्य दर्शन के प्रवर्तक

उपनिषदों एवं परवर्ती ग्रन्थों में उपलब्ध दार्शनिक विचारों को व्यवस्थित सिद्धांत के रूप में जिन आचार्यों ने प्रस्तुत किया, वे आचार्य सांख्यदर्शन के प्रवर्तक कहे जाते हैं।

Scanned with CamScanner